वीर संवत् २४९१, भाद्र कृष्ण १४, शुक्रवार
दिनांक-२४-०९-१९६५, गाथा-७, प्रवचन-६ (७)

गाथा चलती है न? उसमें यह परमात्मप्रकाश है। आचार्य और उपाध्याय और साधु की स्थिति क्या है, ऐसा पहिचानकर प्रभाकर भट्ट उन्हें नमस्कार करता है। पहले अरिहन्त और सिद्ध का स्वरूप बतलाकर, पहिचान करके नमस्कार किया। अब सच्चे आचार्य, उपाध्याय, साधु कैसे होते हैं? उन्हें पहिचानकर नमस्कार करना, वह वास्तविक नमस्कार कहलाता है।

अब आचार्य की व्याख्या चलती है अपने तो। णमो लोए सव्व आईरियाणं की व्याख्या चलती है। देखो! यहाँ दर्शन से फिर से लेते हैं, देखो! पहले क्या लिया? देखो! कि यह आत्मा है वस्तु अनन्त गुणरूप, स्वरूपरूप, एक स्वभावरूप आत्मा। इसे कर्म का सम्बन्ध है, व्यवहार से असद्भूत व्यवहारनय से। वस्तु स्वभाव की दृष्टि से वह सम्बन्ध नहीं है। अर्थात् व्यवहार भी बतलाया, कर्म का सम्बन्ध है, ऐसा बतलाया और वस्तु के स्वभावदृष्टि से उस सम्बन्धरहित है। पश्चात् आत्मा की पर्याय में राग का सम्बन्ध है। पुण्य और पाप, दया, दान, शुभाशुभभाव, उसका वर्तमान पर्याय में अशुद्ध निश्चयनय से सम्बन्ध है। वस्तु की अन्तर्दृष्टि से देखने पर वस्तु को उसके साथ कुछ सम्बन्ध नहीं है। इसलिए दो दो का एक का ज्ञान कराया और एक को उपादेय बनाया। समझ में आया? फिर चार ज्ञान की पर्याय। मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय है। तथापि वह विभावगुण है। इसलिए होने पर भी वह हेय है और एक शुद्ध द्रव्यस्वभाव अखण्ड... है न अन्तिम? वह विभावपर्याय रहित चिदानन्द चिद्रूप एक अखण्ड स्वभाव शुद्धात्म तत्त्व, वह अभूतार्थ है, सत्यार्थ है, सत्य यह है। वह है सही व्यवहार से सच्चा। परन्तु परमार्थ सच्चा शुद्धात्म ज्ञायकभाव अनन्त गुणरूप एक स्वभाव, ऐसा शुद्धात्मा वही उपादेय और अंगीकार करनेयोग्य है। ऐसी श्रद्धा निश्चय सम्यग्दर्शन कही जाती है।

चार गति कही। देखो! सर्वज्ञ ने देखा हुआ तत्त्व व्यवहार और निश्चय दोनों का साथ में ज्ञान कराकर, उपादेय क्या है, यह बताते हैं। चार गति है। एक समय में चार गति होती है। परन्तु उस गति का विभावभाव हेय है। है अवश्य, हेय है। अकेला

समयसार भूतार्थ ज्ञायक स्वभाव एकरूप स्वभाव, अनन्त गुण का एकरूप स्वभाव, वह शुद्धात्मा भूतार्थ। उसके सन्मुख, उसकी दृष्टि करके निश्चय सम्यक्त्व प्रगट करना, उसे सम्यग्दर्शन कहते हैं। कहो, समझ में आया?

वही सब प्रकार आराधनेयोग्य है। आत्मा है। **उससे भिन्न जो परवस्तु है, वह सब त्याज्य है।** चार बोल कहे ये। गति, मतिज्ञान आदि विभावगुण, रागादि अशुद्ध पर्याय और कर्म का सम्बन्ध, ये चारों हेय है। दृष्टि में से इन्हें छोड़नेयोग्य है। एक शुद्ध चैतन्य द्रव्य अनन्त गुण स्वभावरूप एक है। **ऐसी दृढ़ प्रतीति...** उसकी अन्तर में निश्चय प्रतीति, **चंचलता रहित...** अस्ति से दृढ़ प्रतीति (कहा), चंचलतारहित, दोषरहित **निर्मल अवगाढ़ परम श्रद्धा है, उसको सम्यक्त्व कहते हैं,...** देखो! आचार्य को ऐसा समकित होता है। नहीं तो वे आचार्य नहीं कहे जाते। कहो, समझ में आया इसमें?

उसको जो आचरण अर्थात् उस स्वरूप परिणमन वह दर्शनाचार... यह प्रतीति का परिणमन जो साथ में होना, उसका नाम दर्शनाचार आचार्य भगवन्तों को होता है। समझ में आया? **और उसी निजस्वरूप में...** भूतार्थ जो वस्तु एक स्वरूप है, इन चार को हेय करके एक स्वरूप स्वभाव भूतार्थ, परमार्थ समयसार है, उसके स्वरूप में **संशय-विमोह-विभ्रम-रहित...** उस स्वरूप में संशय नहीं। कुछ होगा, ऐसा अनध्यवसाय नहीं और विभ्रम अर्थात् विपरीतता नहीं। उसमें चार बोल रहित श्रद्धा कही थी। इसमें **संशय-विमोह-विभ्रम-रहित जो स्वसंवेदनज्ञानरूप ग्राहकबुद्धि...** भगवान आत्मा ज्ञान से अन्तर ज्ञान द्वारा वेदन में आये, ज्ञात हो, अनुभव में आये, ऐसी जो ज्ञान की ग्राहक सम्यग्ज्ञान बुद्धि, उसे सम्यग्ज्ञान कहा जाता है। इन आचार्य भगवन्त को ऐसा सम्यग्ज्ञान होता है।

उसका जो आचरण अर्थात् उसरूप परिणमन... इस सम्यग्ज्ञान का परिणमन ही पर्यायरूप परिणमन ही हो गया। इसका नाम आचार्य का ज्ञानाचार भाव कहने में आता है। कहो, सेठी! यह आचार्य ऐसे (होते हैं)। यह कभी निर्णय नहीं किया था। यह बराबर है, (ऐसा कहते हैं)। आहाहा! अपने कल यहाँ तक आया था, लो! समझ में आया? यह तो फिर से दो आचार थोड़े इकट्ठे लिये।

अब तीसरा आचार्य का आचार, तीसरा चारित्राचार कैसा होता है ? **उसी शुद्ध स्वरूप में...** जो पहले कहा था, यह **'तत्रैव'** शब्द पड़ा है न ? भाई ! अन्दर। **'तत्रैव' 'तत्रैव'—'तत्र एव'।** जो शुद्ध द्रव्य ज्ञायकभाव अनन्त गुण स्वभावरूप एकरूप, ऐसा जो भगवान आत्मा **'तत्रैव'** अर्थात् **उसी शुद्ध स्वरूप में शुभ-अशुभ समस्त संकल्प-विकल्प रहित...** देखो ! कहो, किसे होगा यह ? आठवें में होगा यह ? यहाँ तो अभी आचार्य की बात करते हैं कि आचार्य ऐसे होते हैं। समझ में आया ? और यह आचार्य उपदेश करे तो ऐसा करेंगे। उपाध्याय उपदेश करेंगे न ? तब उपदेश ऐसा करेंगे, उस समय की स्थिति का वर्णन है। समझ में आया ?

शुद्ध स्वरूप में शुभ-अशुभ समस्त संकल्प रहित जो नित्यानन्दमय निजरस का आस्वाद,... नित्यानन्द अतीन्द्रिय आनन्द भगवान आत्मा, उसका आनन्दमय निज रस, उसका आस्वाद, उसका स्वाद, उसका **निश्चल अनुभव, वह सम्यक्चारित्र है,...** इसका नाम सच्चा चारित्र। अमरचन्दभाई ! आहाहा ! यह तो बात भी अभी सुनी न हो कि चारित्र कैसा होता है ? णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आईरियाणं। जाओ ! यह सेठिया जैसे भी समझे बिना जय नारायण करते हैं सबको। मोतीरामजी ! बराबर है ? गृहस्थ व्यक्ति सेठिया, दस-दस पुत्र। उसको बेचारे को ऐसा कि ओहो ! सेठिया ने देखो मन्दिर बनवाया। और यह हमको मानते हैं तो हम कुछ होंगे तब मानते होंगे या नहीं ?

मुमुक्षु : उसकी अपेक्षा तो अच्छे न ?

पूज्य गुरुदेवश्री : अच्छे किसके ? कहते हैं, भगवान ! ऊपर कहा था यह, हों ! यह समयसार एकरूप चिदानन्द एक अखण्ड स्वभाव शुद्धात्मतत्त्व। उसके अन्दर में, उसके ऊपर एकाग्र होकर निश्चय आस्वाद, आनन्द का आस्वाद का अनुभव, उसका आचरण अर्थात् परिणमन, वह चारित्राचार है। यहाँ तो आनन्द का परिणमन, उसे चारित्राचार कहा, भाई !

मुमुक्षु : सीधे सीधा।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। सीधी बात। और पंच महाव्रत व्यवहारनय नहीं परन्तु निश्चय। और चारित्र निश्चय अर्थात् अतीन्द्रिय आनन्द के अनुभवन में आत्मा के

आनन्द का उग्र आस्वाद लेना, उसे चारित्राचार कहने में आता है। आहाहा! कहो, समझ में आया? यह आनन्द निश्चल अनुभव निज रस का निजानन्द का। शुभाशुभ विकल्परहित कहा है। शुभभाव का आनन्द, ऐसा नहीं कहा। यहाँ तो अभी अब छठवें गुणस्थान में शुभभाव होता है, उसमें उसे चारित्र होता है। कौन जाने क्या करते हैं?

मुमुक्षु : गृहस्थ से तो अच्छे है न?

पूज्य गुरुदेवश्री : गृहस्थ से अच्छे किसके? बिगड़ा हुआ दूध मोळी छाछ से भी गया-बीता है। समझ में आया? छाछ होती है न? मट्ठा। बिगड़ा हुआ दूध, बिगड़ा हुआ। बिगड़ा हुआ दूध तो मोळी छाछ से भी गया-बीता है। मोळा मट्ठा हो तो रोटी भी खायी जाती है। बिगड़े हुए दूध में (खायी जाती है)?

मुमुक्षु : रस अधिक अच्छा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : मार डालेगा, उगल डालेगा, सब निकाल डालेगा। समझ में आया? यह तो अच्छे ही हैं, ऐसा कहते हैं। मुझसे अच्छे हैं न! यह बड़े आचार्य, ऐसा मानता है अज्ञानी।

यहाँ तो कहते हैं... आहाहा! क्या? देखो न! व्याख्या। प्रभाकर भट्ट इस प्रकार पहिचानकर पंच परमेष्ठी को नमस्कार करता है। यह आठवीं गाथा में लेंगे। समझ में आया? कि इस प्रकार पहिचानकर प्रभाकर भट्ट नमस्कार करके योगीन्द्रदेव से पूछेगा, प्रभु! हमको अनन्त संसार (में) भटकते थे (वह) अब बन्द कैसे हो, ऐसा उपाय हमें बताओ। समझ में आया? लो! यह चारित्राचार। नित्यानन्दमय शुभाशुभ विकल्परहित निज रस का आस्वाद, निश्चल अनुभव का नाम सम्यक्चारित्र, उसका आचरण / परिणमन वह चारित्राचार है।

अब तप, तप। यह आचार्य का चौथा तपाचार। पहला दर्शनाचार, दूसरा ज्ञानाचार, तीसरा चारित्राचार, चौथा तपाचार। **उसी परमानन्दस्वरूप में...** देखो! यह परमानन्दस्वरूप जो भूतार्थ ज्ञायकभाव, अतीन्द्रिय आनन्द का पिण्ड—दल, उसमें... समझ में आया? **परद्रव्य की इच्छा का निरोधकर...** विकल्पमात्र का उत्पन्न होना अटककर। सहज आनन्दरूप स्वाभाविक अतीन्द्रिय आनन्दरूप तपश्चरणस्वरूप। **सहज आनन्दरूप**

तपश्चरणस्वरूप... जिसमें अतीन्द्रिय आनन्द का सहज अनुभव होता है, उसे तपस्या कहा जाता है। कहो, मोतीरामजी! रेत के ग्रास नहीं, आनन्द के ग्रास हैं। देखो न! **सहज आनन्दरूप तपश्चरणस्वरूप...** अर्थात् यह तपस्या। शोभालालभाई!

मुमुक्षु : आनन्द की धारा बढ़ती जाये।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। बढ़ती जाये। हमारे सेठ ठीक कहते हैं। अतीन्द्रिय आनन्द अन्दर में भरा है, वह बढ़ता जाये। अन्दर में आनन्द (उग्ररूप से वेदन में आये), तब उसे तपस्या कहा जाता है। बाकी लंघन है, लंघन... लंघन। लंघन कहते हैं न? क्या कहते हैं?

देखो! **सहज आनन्दरूप तपश्चरणस्वरूप...** समझ में आया? लो! '**सुखरसास्वादस्थिरानुभवनं च सम्यक्चारित्रं तत्राचरणं परिणमनं चारित्राचारः, तत्रैव परद्रव्येच्छानिरोधेन सहजानन्दैकरूपेण प्रतपनं तपश्चरणं**' उसका परिणमन, उसे तपश्चरण आचार—तपाचार उसे कहते हैं। आहाहा! यह आचार्य को ऐसे पाँच निश्चय आचार होते हैं। फिर व्यवहार कहेंगे। निश्चय सहित हो तो उसे व्यवहार कहते हैं। **उसी शुद्धात्मस्वरूप में... उसी...** अर्थात् '**तत्रैव**' जो भूतार्थ आत्मा एक समय में अखण्ड चिदानन्द स्वभाव, उसकी दृष्टि, उसका ज्ञान, उसका आचरण, उसका तप प्रतपन।

शुद्धात्मस्वरूप में अपनी शक्ति को प्रकटकर आचरण परिणमन वह वीर्याचार है। पुरुषार्थ, स्वभाव में उग्र पुरुषार्थ करके शुद्धात्मस्वरूप में वीर्य का स्फुरण होना, पुरुषार्थ का स्फुरण, इसका नाम वीर्याचार कहा जाता है। राग का विकल्प, वह सब व्यवहार में जाता है। निमित्त की बात यहाँ है नहीं। **उसी शुद्धात्मस्वरूप में...** अपनी शक्ति को प्रगट करके, लो! पुरुषार्थ से अनन्त आनन्द आदि शक्ति को प्रगट करके। अनन्त गुण की शुद्धता को पुरुषार्थ द्वारा प्रगट करके, आचरणरूप परिणमन होना, उसका नाम वीर्याचार है। **यह निश्चय पंचाचार का लक्षण कहा।** लो! यह सच्चे पंच आचार का स्वरूप कहा, लक्षण कहा। ऐसे पाँच निश्चय हो तो उसे आचार्य कहा जाता है। वरना आचार्य कहने में नहीं आता। समझ में आया?

अब व्यवहार का लक्षण कहते हैं... व्यवहार साथ में होता है। ऐसे आचार्य को

निश्चय दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तपाचार, वीर्याचार में साथ में व्यवहार का विकल्प, राग का विकल्प, व्यवहार कैसा होता है व्यवहार उसका, उसका यहाँ ज्ञान कराते हैं। **निःशंकित को आदि लेकर अष्ट अंगरूप बाह्यदर्शनाचार,...** समकित के व्यवहार आचार वीतराग मार्ग में निःशंकता, अन्य धर्म की इच्छा का अभाव, आदि आठ आचार। निःशंक, निःकांक्ष, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य (और) प्रभावना ये आठ आचार होते हैं। निश्चय समकित तो कहा—अपने स्वरूप में अन्तर निश्चल चंचलतारहित परम दृढ़ प्रतीति, उसका परिणमन, वह निश्चय समकित। व्यवहार समकित, उसमें विकल्प ऐसा उसको होता है। भगवान सर्वज्ञ ने कहे हुए मार्ग में उसे शंका नहीं होती, अन्यमति आदि की इच्छा नहीं होती, ग्लानि नहीं होती, पूर्ण कब होगा, ऐसा द्वेष नहीं होता। समझ में आया? उलझन नहीं होती, मूंझवण को क्या कहते हैं? उलझन—घबराहट। कहाँ होगा? कैसा होगा? ऐसा नहीं होता। अमूढदृष्टि होती है। उपगूहन—अपने धर्म की वृद्धि करता हो और दोष को छिपाता हो। स्थितिकरण—स्वरूप में व्यवहार से स्थिर करता हो। वात्सल्य—धर्म के प्रति, धर्मी के प्रति प्रेम रखता हो और प्रभावना शुभभाव की हो। उसे समकित के आठ व्यवहार आचार कहे जाते हैं। कहो, समझ में आया?

देखो! यह सर्वज्ञ ने कहे हुए मार्ग में निःशंकता आदि व्यवहार होता है। अपने स्वरूप में निःशंक आदि का परिणमन, वह निश्चय है। बाहर में वीतराग सर्वज्ञ ने कहा हुआ मार्ग, इसमें निःशंक (होता है)। अन्यमति में कहा हुआ (मार्ग हो), उसमें बिल्कुल इच्छा नहीं होती। ऐसे आठ आचार व्यवहार से विकल्प हो, उसे व्यवहार समकित के आचार कहे जाते हैं। कहो, समझ में आया?

अब, व्यवहार ज्ञानाचार। निश्चय ज्ञानाचार तो अन्तर स्वरूप में स्वस्वरूप की ग्राह्य बुद्धि स्वसंवेदन बुद्धि, वह निश्चयज्ञान। उसके साथ व्यवहार ज्ञान का विकल्प ऐसा होता है। **शब्द शुद्ध, अर्थ शुद्ध, उभय शुद्ध...** ज्ञान का व्यवहार है न? काल में पढ़ना, विनय से पढ़ना, जिससे समझा हो, उसे गुप्त नहीं रखना, कोई धर्म पाता हो, उसे अन्तराय नहीं करना। ऐसे आठ प्रकार के बाह्य ज्ञानाचार। कहो, समझ में आया? उसके

आठ प्रकार के बाह्य आचार हैं वे ज्ञानाचार। देखो! '**कालविनयाद्यष्टभेदा**' अन्दर संस्कृत में है। संक्षिप्त किया है। काल में पढ़ना, विनय से पढ़ना, शुद्धि से पढ़ना, बहुमान से पढ़ना, कोई पढ़ता हो उसे अन्तराय करना नहीं, असातना करना नहीं—इत्यादि सम्यग्ज्ञान के आठ आचार, निश्चय ज्ञानाचार के काल में उसे ऐसा भाव होता है।

अब, व्यवहारचारित्र। निश्चयचारित्र तो कहा था कि अन्दर निजानन्द के आस्वाद का अनुभव, वह निश्चयचारित्र है। व्यवहारचारित्र, पंच महाव्रत, शुभराग। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। शुभराग है। **पंच समिति...** विकल्प। ईर्या, भाषा, ऐषणा (आदान निक्षेपण और प्रतिष्ठापन) आदि। **तीन गुप्तिरूप व्यवहार चारित्राचार...** तेरह कहे—पाँच (महाव्रत), पाँच (समिति)=दस और तीन (गुप्ति)=तेरह। व्यवहार तेरह प्रकार के चारित्र आचार का विकल्प, उसे व्यवहारचारित्र कहा जाता है। वह पुण्यबन्ध का कारण है। उसे परम्परा मोक्ष का कारण कहेंगे। समझ में आया? यह व्यवहारचारित्र कहा।

(अब) व्यवहारतप। **अनशनादि बारह तपरूप तपाचार...** यह अनशन, ऊनोदर आदि बारह तप है न? उसका भाव होना, विकल्प उठना, उसे व्यवहार तपाचार कहते हैं। **अपनी शक्ति प्रगट कर मुनिव्रत का आचरण, वह व्यवहार वीर्याचार...** अट्ठाईस मूलगुण का पालन, शक्ति प्रमाण बराबर करके, व्यवहार मुनिव्रत का आचरण, यह व्यवहार वीर्याचार। लो! पाँच हो गये व्यवहार, पाँच हो गये निश्चय। **यह व्यवहार पंचाचार परम्पराय मोक्ष का कारण है,... 'पारंपर्येण साधक...'** संस्कृत में ऐसा शब्द है। निमित्त है न? निमित्त अर्थात् उसे छोड़कर स्थिर होगा। समझ में आया? अहो! स्वभाव के आश्रय से जो हुए पाँच आचार, वही निश्चय मोक्ष का साधक है। परन्तु यह व्यवहार को परम्परा साधक कहा जाता है। निमित्त है। व्यवहार से निमित्त अनुकूल गिनकर ऐसा ही भाव, उसे पाँच आचार का होता है, दूसरा अन्यमतियों ने कल्पित (व्यवहार) देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा आदि उसे होते नहीं, अर्थात् उसे व्यवहार को—निमित्त को परम्परा मोक्ष का साधक कहा गया है। कहो, समझ में आया?

अब, वे आचार्य कैसे होते हैं? देखो! विशिष्टता अब। दो बातें कीं। **निर्मल**

ज्ञान-दर्शनस्वभाव जो शुद्धात्मतत्त्व उसका यथार्थ श्रद्धान,... आचार्य जैन के अर्थात् वास्तविक तत्त्व के। जैन के आचार्य अर्थात् वास्तविक आचार्य। कैसे होते हैं? कि **निर्मल ज्ञान-दर्शनस्वभाव जो शुद्धात्मतत्त्व...** पूरा पदार्थ—निर्मल ज्ञान, दर्शन स्वभाववाला आत्मा। **उसका यथार्थ श्रद्धान,...** यह पहले कहा था, उसके पाँच लेंगे। यहाँ तो प्ररूपणा करेंगे। पालन करे और पालन करावे। यथार्थ सम्यग्दर्शन, **यथार्थ श्रद्धान, ज्ञान, आचरण तथा परद्रव्य की इच्छा का निरोध (तप) और निजशक्ति का प्रगट करना, ऐसा यह निश्चय पंचाचार साक्षात् मुक्ति का कारण है।** देखो! वह परम्परा कहा था न ऊपर? उसके साथ में लिया। साक्षात् तो वह मुक्ति का कारण है। वह तो बीच में निमित्त है, परम्परा आरोप देकर कहा जाता है। अरे! शास्त्रों को भी देखते नहीं कि आचार्य क्या कहते हैं, उनका हृदय क्या है?

ऐसे निश्चय व्यवहाररूप पंचाचारों को... व्यवहार नहीं चाहिए बीच में। है इसमें? प्रकाशित हो गया है? व्यवहार नहीं चाहिए। व्यवहार नहीं। निकाल दिया है। है न यहाँ? निकाल दिया है न? देखो न! '**वीतरागनिर्विकल्पसमाधिं स्वयमाचरन्त्यन्या-नाचारयन्तीति भवन्त्याचार्या...**' ऐसा है। व्यवहार की बात नहीं। व्यवहार बतलाया। वह निश्चय पंचाचारों को, ऐसा लेना। व्यवहार निकाल डालो बीच में शून्य। है? सेठी! कहाँ है? व्यवहार नहीं चाहिए। व्यवहार को रखना अन्दर। **ऐसे निश्चय पंचाचारों को आप आचरें और दूसरों को आचरवावें ऐसे आचार्यों को मैं वन्दता हूँ।** ऐसे पाँच को आचरण करे और आचरण करावे।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या हुआ? आचरण करावे उसमें, भाई! कि उसे कथनवाला आचार्य लिया है। दूसरे को कहे न? ऐसा मार्ग है, ऐसा कहे न? तब वह कौन से गुणस्थान में होता है? आठवें गुणस्थान में होता है? सातवें में होता है यह? पाँच आचार आचरण करे और आचरण करावे। आचरण करावे, इसका अर्थ कि कहे कि यह आचरण करो, ऐसा आचरण करो। यह छठे गुणस्थानवाले के निश्चय और व्यवहार का वर्णन यहाँ किया है। समझ में आया? आहाहा!

भगवान! तेरे मार्ग की रीति क्या है? अरे! निर्विकल्प निरावरण निर्लेप भगवान

आत्मा की अन्तर निर्विकल्प दृष्टि हुए बिना मार्ग की शुरुआत कहाँ से होगी ? आहाहा! उसके ज्ञान बिना सच्चा ज्ञान कहाँ से होगा ? और उसमें रमणता बिना चारित्र का आनन्द कहाँ से होगा ? और शुद्ध की इच्छा के आनन्द की वृद्धि बिना उस इच्छा का निरोध का आनन्द कैसे होगा ? और अन्दर वीर्य का पूर्ण अनन्त शुद्ध गुण का सामर्थ्य रस के रूप में वीर्याचार, इसके बिना आचार्य की स्थिति कहाँ से होगी ? ऐसे **पंचाचार को आप आचरें और दूसरों को आचरवावें...** आचरवावे अर्थात् ? ध्यान में बैठा हो, उसे आचरवाते होंगे ?

मुमुक्षु : उपदेश देते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : उपदेश देते हैं। यह तुम्हारे सब कितने ही इनकार करते हैं। यह भी पूर्व के हों, वे कहाँ जाये ?

मुमुक्षु : व्यवहार निकाल डाले।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। व्यवहार निकाल डालना। पाठ में व्यवहार है ही नहीं। व्यवहार का ज्ञान कराया। आचरण ऐसे आराधन पहले साधारण रीति से कहा। यहाँ निकलवा दिया। नहीं, टीका में नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, नहीं। नहीं निश्चय पंचाचार। **आप आचरें...** देखो न! पाठ है। '**स्वयमाचरन्त्यन्यानाचारयन्तीति...**' दूसरे को आचरवावे इतनी बात है। समझ में आया ? '**निर्विकल्पसमाधिं स्वयमाचरन्त्य...**' देखो! यह व्यवहार कहा जाता है। पहले कहा न ? ज्ञान कराया है, ज्ञान कराया है। लो! ऐसे आचार्य को मैं वन्दन करता हूँ। प्रभाकर भट्ट कहता है कि ऐसे आचार्यों को मैं वन्दन करता हूँ। समझ में आया ? देखो! यह आचार्य।

अब उपाध्याय। जैन के सच्चे उपाध्याय कौन ? णमो लोए सव्व उवज्झायाणं। यह णमो लोए सव्व साहूणं है न ? यह 'णमो लोए सव्व' पाँचों में आता है। णमो लोए सव्व अरिहंताणं, णमो लोए सव्व सिद्धाणं, णमो लोए सव्व आईरियाणं, णमो लोए सव्व उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं—ऐसे पाँचों। अन्त में शब्द आता है, वह पाँचों में

ले लेना। समझ में आया? परन्तु कहाँ? यह ऐसे हों वे। सर्व उपाध्याय अर्थात् दूसरे सब उपाध्याय नाम धराते हों और स्थापनावाले और द्रव्य, वह नहीं।

उपाध्याय कैसे हैं? कि पंचास्तिकाय, देखो! पाँच अस्तिकाय को वे मानते हैं। पाँच अस्तिकाय। काल के अतिरिक्त पाँच अस्ति। जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय—ये पाँच। पाँच वस्तु को माने उपाध्याय। सच्चे उपाध्याय जैन के हों वे इस अनुसार मानते हैं। यह पाँच अस्तिकाय जो जगत में हैं, उन्हें न माने, वह समकिती नहीं परन्तु वह मिथ्यादृष्टि है। कहो, समझ में आया?

पंचास्तिकाय, षट्द्रव्य, सप्त तत्त्व, नव पदार्थ हैं, उनमें निज शुद्ध जीवास्तिकाय... यह उपादेय स्वयं प्ररूपित करे। समझ में आया? उपाध्याय का कथन ऊपर का वजन है न? उसमें आचरण के ऊपर का है। आचार्य अर्थात् आचरे, उपाध्याय अर्थात् उपदेश। उपाध्याय (उसमें) कथन की पद्धति (की) मुख्यता है। सच्चे-सत्य उपाध्याय किसे कहना? कि जो पाँच अस्तिकाय में... माने पाँच अस्तिकाय, परन्तु उसमें **आप शुद्धात्मा हैं, वही उपादेय (ग्रहण करनेयोग्य) है, अन्य सब त्यागनेयोग्य हैं, ऐसा उपदेश करते हैं,...** ऐसा उपदेश करते हैं। समझ में आया? यह आत्मा अन्दर देह से भिन्न शुद्ध चिदानन्द की मूर्ति है। यह एक ही अखण्डानन्द भगवान अन्तर में आदरनेयोग्य है, ऐसा जो उपाध्याय माने और प्ररूपित करे, (वह सच्चा उपाध्याय है)। समझ में आया?

उपाध्याय उसे कहते हैं, उपदेशक उसे कहते हैं, सच्चे उपदेशक उपाध्याय मुनि उसे कहते हैं कि जगत में पाँच अस्तिकाय के पदार्थ भगवान केवली ने देखे, ऐसे हैं, ऐसा माने। मानकर निज आत्मा शुद्ध भगवान आत्मा है, सच्चिदानन्दस्वरूप परमानन्द की मूर्ति आत्मा अन्दर है, वही अन्तर में आदरनेयोग्य है, ग्रहण करनेयोग्य है, अनुभव करनेयोग्य है। ऐसा जगत को कहते हैं। स्वयं अनुभव करते हैं, जगत को कहते हैं, उन्हें सच्चा उपाध्याय—उपदेशक कहा जाता है। कहो, अमरचन्दभाई! यह तो बात कुछ नहीं, ... यह आत्मा, करो विकल्प। परन्तु क्या विकल्प घटावे? विकल्प घटावे तब दूसरी चीज़ है न? राग है, राग का विषय है, विषय परद्रव्य है। यह पाँच अस्तिकाय

राग-विकल्प का विषय है। परन्तु उसमें से निर्विकल्प एक आत्मा (उपादेय करे)। ऐसा मानकर, जानकर। समझ में आया? आहाहा! निज शुद्ध जीवास्ति, वापस, हों! भगवान शुद्ध हो गये, उनका नहीं यहाँ।

यहाँ परमात्मा निज शुद्ध परमानन्द की मूर्ति भगवान आत्मा अन्तर में है। अतीन्द्रिय आनन्द का रस स्वभाव भरपूर भगवान आत्मा है। निज (आत्मा), उसकी इसे खबर नहीं। मैं कौन हूँ, उसकी इसे खबर नहीं होती। मैं तो यह एक बनिया हूँ, और यह व्यापारी हूँ और यह रागी हूँ और धूल हूँ और गतिवाला हूँ। कहते हैं कि, तुझे तेरे आत्मा की खबर नहीं। कहो, समझ में आया? आहाहा!

और जगत में छह द्रव्य हैं। देखो! अब काल मिलाया। पाँच अस्तिकाय में काल नहीं था और काल मिलाकर छह द्रव्य जगत में भगवान ने देखे हैं, (ऐसा सिद्ध किया)। छह वस्तुएँ हैं। अनन्त आत्मायें, अनन्त परमाणु, असंख्य कालाणु, एक धर्मास्ति, (एक) अधर्मास्ति, एक आकाश (ऐसे) छह द्रव्य अनादि-अनन्त हैं। क्या कहा? समझ में आया? यह निज शुद्ध जीवास्तिकाय, निज शुद्ध जीवद्रव्य। पहले में पाँच अस्तिकाय में निज शुद्ध जीवास्तिकाय (था) और इसमें निज शुद्ध जीवद्रव्य (कहा है)। छह द्रव्य में छह द्रव्य है। मानना, व्यवहार से जानना। निश्चय में आत्मा भगवान निज शुद्ध जीवद्रव्य। समझ में आया? वही आदरणीय है। वही आदरणीय अन्दर अंगीकार कर। बाकी सब छोड़नेयोग्य है। दया, दान के विकल्प, गति-फति सब छोड़नेयोग्य है, वे आदरनेयोग्य नहीं। आहाहा! ऐसा उपाध्याय करे और प्ररूपित करे। समझ में आया?

सप्त तत्त्व... सात तत्त्व है न? जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष। यह सात तत्त्व हैं। परन्तु निज शुद्ध जीवतत्त्व आदरणीय है। देखो! संवर, निर्जरा और मोक्ष भी आदरणीय नहीं। सेठी! आहाहा! दया, दान के विकल्प तो शुभ हैं, वह आदरनेयोग्य नहीं, परन्तु संवर-निर्जरा-मोक्ष की निर्मल पर्याय है। द्रव्यस्वरूप जो शुद्ध अखण्डानन्द भगवान, पूर्ण पूर्ण परमात्मा निज स्वरूप, वही अन्तर अंगीकार करनेयोग्य है। ओहोहो! कहो, नेमिदासभाई! देखो! वापस दो-दो बातें करते जाते हैं इकट्ठी। वह है अवश्य। उसका ज्ञान हो उसे। आदरणीय एक ही होता है।

नौ पदार्थ हैं,... पुण्य-पाप मिलाये। नौ पदार्थ हैं—जीव, अजीव, पुण्य-पाप, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष। परन्तु नौ पदार्थ में निज शुद्ध जीव पदार्थ, देखो! नौ पदार्थ में पुण्य आदरणीय नहीं और संवर-निर्जरा-मोक्ष भी आदरणीय नहीं। वह पर्याय है, हेय है। ओहोहो! ऐसा उपाध्याय प्ररूपित करते हैं। मोतीरामजी!

मुमुक्षु : प्रतिमा का कब प्ररूपित करेंगे?

पूज्य गुरुदेवश्री : प्रतिमा का कब प्ररूपित करेंगे? प्रतिमा का आ गया बीच में। प्रतिमा हो, उसका विकल्प ज्ञान करावे। अरे! उसे आत्मा परमात्मस्वरूप अन्दर है, (उसकी) खबर नहीं होती। अनन्त काल का अनजाना मूढ़। मूर्खता से भटकता हुआ चौरासी के अवतार में गोते खा-खाकर मर गया। समझ में आया? यह राजा हुआ हो तो मूढ़ है और सेठिया हुआ हो तो मूढ़ है और देव हुआ हो तो मूढ़ है। शोभालालभाई! आहाहा!

यह भगवान आत्मा अन्तर में वस्तु है या नहीं, वस्तु? तो वस्तु में कोई स्वभाव शक्ति का सत्त्व है या नहीं? तो कितनी शक्ति का इसका फिर इसे विचार करके (अनुभव करना)। अनन्त शक्तियाँ हैं। एक, दो, तीन, ऐसा नहीं, अनन्त। वस्तु है तो उसे शक्ति होती है अर्थात् स्वभाव होता है, अर्थात् गुण होते हैं, अर्थात् सामर्थ्य होता है। ऐसे अनन्त गुण का एक तत्त्व, ऐसा एक स्वभाव भगवान, वही धर्मी जीव को अन्तर में आदरनेयोग्य है। आहाहा! ऐसा उपाध्याय प्ररूपणा करते हैं। दूसरी प्ररूपणा करे, वह उपाध्याय नहीं। अमरचन्दभाई! आहाहा! मन्त्रीजी! कैसी बात है? आहाहा! पुण्य से धर्म मनावे, पुण्य से लाभ मनावे, पुण्य को आदरणीय मनावे, वे उपाध्याय नहीं, वे उपदेशक नहीं, वे साधु नहीं। आहाहा!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : मार्ग संसार है, उसे मोक्षमार्ग बतावे। समझ में आया? यह वे शोर मचाये, लो! इसे संसार (कहा)। परन्तु सुन न! जितना राग है, उतना बन्धन है। हो भले। होता है, जाननेयोग्य है न व्यवहार से आराधनेयोग्य ऐसा भी कहा जाता है। पंचाचार व्यवहार। परन्तु उसका फल तो पुण्यबन्ध है।

भगवान अन्तर आत्मा... कोई भी मनुष्य ऐसा विचार करे कि एक मैं हूँ या नहीं? और फिर भगवान और केवली। परन्तु यह है या नहीं आत्मा? तो है वह है, वह क्या है? है वह कुछ है या नहीं उसमें? परन्तु क्या? जैसे गुड़ है। गुड़ है या नहीं? है। तो क्या है? तो यह मिठास है। मिठास का पिण्ड है, दल सफेद है, कोमल इत्यादि-इत्यादि। इसी प्रकार आत्मा है। तो है वह क्या है? ज्ञान है, दर्शन है, आनन्द है, शान्ति है, वीर्य है, ऐसे अनन्त-अनन्त शक्ति का पिण्ड आत्मा है। कभी भगवान का नाम भी सुना नहीं कि भगवान कैसे होते हैं? और आत्मा कैसा होता है? समझ में आया? आहाहा!

देखो! यह निज शुद्ध जीव पदार्थ नौ में एक ही आत्मा आदरणीय है। कितनी बात रख दी है! नौ तत्त्व है सही। जीव और जड़ दो तथा यह पर्याय—अवस्था। शुभ-अशुभ, दो होकर आस्रव, बन्ध; संवर, निर्जरा, मोक्ष। तो भी होने पर भी, है अवश्य। एक जीव पदार्थ भगवान आत्मा पूर्णानन्द का नाथ एकरूप स्वभाव अन्तर वस्तु, वही आदरणीय है। कहो, समझ में आया? आहाहा! कैसी स्पष्ट बात है!

ऐसा मनुष्यपना मिला, उसमें यह कुछ नहीं करे और मरकर चला जायेगा। चौरासी के अवतार में अनन्त काल से गोते खाता है और खायेगा। उसमें आत्मा क्या चीज़ है, उसकी कीमत नहीं करे, तो दूसरे की कीमत जायेगी नहीं, दूसरे की कीमत टलेगी नहीं। इसकी कीमत हो तो दूसरे की कीमत रहेगी नहीं। आहाहा! शुभभाव की कीमत नहीं रहेगी। अरे! मोक्ष की पर्याय की कीमत नहीं। पूरा द्रव्य है, उसमें और कीमत इसकी कहाँ करना? उसकी करना या इसकी करना? ऐसा कहते हैं, लो! आहाहा! जिसमें से मोक्ष पर्याय अनन्त-अनन्त चली आती है, प्रवाह। ऐसा द्रव्य स्वभाव! ऊपर कहा था न? समझ में आया? एक चिदानन्द चिद्रूप एक अखण्ड स्वभाव शुद्धातमतत्त्व वही सच्चा है, भूतार्थ है, वही परम सत्य है। आहाहा!

व्यक्त है वस्तु, वस्तु... वस्तु वह फिर व्यक्त और अव्यक्त कैसी? वस्तु है, है, प्रगट है। वस्तु और अप्रगट होगी? अप्रगट का अर्थ अभाव हो जाये। परन्तु कहाँ वह क्या वस्तु है? किसे खबर है? कुछ सुना नहीं, विचार में लिया नहीं। बड़ा महान पदार्थ

प्रभु! यह आत्मा अखण्डानन्द भगवान एक स्वभावी पदार्थ, अनन्त गुण तथापि एक स्वभावी द्रव्य लेना है न? चिदानन्द चिद्रूप एक अखण्ड स्वभाव, देखो न भाषा! द्रव्य एक अखण्ड स्वरूप। उसका ज्ञान अखण्ड, दर्शन अखण्ड, आनन्द अखण्ड, शान्ति अखण्ड। ऐसे अनन्त गुण का एकरूप भगवान, वही अन्तर्मुख में ग्रहण करनेयोग्य है, आदरनेयोग्य है, सेवनयोग्य है और आराधना योग्य है। यह भाई! कैसी (बात)? बाहर की होवे तो, भाई! लाओ, सेवा कर दें। दो घड़ी कोई पूजा कर डाले, भगवान के पास जाकर चलो सेवा (कर आयें)। यह नहीं। यह तो पुण्य भाव है। यह तो शुभभाव, पुण्यभाव है; यह धर्म नहीं। आहाहा! जादवजीभाई!

सच्चे उपाध्याय। उपाध्याय अर्थात् जिनके निकट ज्ञान करना हो और जो सत्य की बात करे, वे कैसे होते हैं? कि अन्तर में निश्चय पाँच आचार तो पालते हों। समझ में आया? और ऐसे तत्त्व का उन्हें सब ज्ञान हो। निश्चय में उनका आत्मा ही आदरणीय ऐसा अनुभव करते हों और प्ररूपणा में भी यही बात आती हो। आहाहा! समझ में आया? ऐसा लगे न, वह स्वयं इतना बड़ा परन्तु ऐसा मानो क्या कहते हैं यह? कहाँ है परन्तु यह? एक थे न? वकील थे। धोया हुआ मूला जैसा इतना बड़ा, महिमा करते हो तो गया कहाँ? भगवानजी वकील थे।

मुमुक्षु : नाम भगवान।

पूज्य गुरुदेवश्री : नाम 'भगवान' था उनका। ऐसी महिमा करते हो, ऐसा आत्मा... आत्मा। परन्तु धोये हुए मूला जैसा गया कहाँ? है सब, परन्तु तुझे भान नहीं। जहाँ है वहाँ नजर करना नहीं। नजर करना नहीं और और कहाँ है? परन्तु कहाँ है, किन्तु आँख उघाड़ तो खबर पड़े या उसके बिना? अन्तर के चैतन्य के नेत्र खोलकर अन्तर ज्योति अनन्त गुण की राशि भगवान विराजता है। स्वयं सच्चिदानन्दस्वरूप ही स्वयं है। आहाहा! समझ में आया?

यह सब है, ऐसा जानकर, हों! अकेला-अकेला आत्मा करे, ऐसा नहीं। उसका कारण कि '**पञ्चास्तिकायषड्द्रव्यसप्ततत्त्वनवपदार्थेषु...**' उसका एक समय की ज्ञान की पर्याय में जानने की और श्रद्धा करने की उसकी सामर्थ्य है। परन्तु वह परलक्ष्यी

सामर्थ्य इतना नहीं। पूरा द्रव्य एक समय में अखण्ड ज्ञायक चिदानन्द एक स्वभाव, उसकी अन्तर में आदरणीय दृष्टि, अनुभव दृष्टि, स्थिरता दृष्टि, आचरण दृश्टि, आचरण भाव, उसे आचरते हुए सन्त जगत को यह आचरने का कहे, यह आचरने का कहे, उसका उपदेश दे। आहाहा! (वर्तमान में तो) पूरी पद्धति बदल गयी, मन्त्रीजी! पद्धति बदल गयी। यह करो, व्रत पालो, भक्ति करो, तप करो, अपवास करो, सोलह भथ्थु करो। हाँ? करने करने का।

यह भगवान आत्मा महान स्वरूप है अन्दर। उसकी अन्तर में दृष्टि, ज्ञान और रमणता करना, यही करने का है, दूसरा करने का क्या था? बाकी तो जड़ की-शरीर की क्रिया होनेवाली हो वह होती है, राग की मन्दता भी उस काल में होती है। परन्तु वह तो पुण्यबन्ध का कारण है। अबन्धस्वभावी दृष्टि में आये बिना अबन्ध परिणाम प्रगट नहीं होते। यह तो बन्धभाव है, हेय है। अभी तो शुभभाव ही हो पड़ा है सर्वत्र। धर्मध्यान वह, संवर-निर्जरा वह। ओहोहो!

ऐसे अर्थ करने लगे। अरे! भगवान, बापू! बहुत कठिन पड़ेगा। यह आत्मा को ऐसे सत्यमार्ग के सामने विरोध में ऐसा अवरोध करता है न! कठिन काम है। ओहोहो! कौन जाने कौन होगा अन्दर में? घर में कोई हीरा अच्छा हो तो चारों ओर से जाँचते हैं। कैसे होगा? प्रकाश... प्रकाश। हीरा की कीमत किसलिए की लोगों ने? कि एक तो टिकाऊ बहुत। टिकाऊ। टिके... टिके... बहुत न? टिके समझे? लम्बे काल रहे। टिके। और थोड़े मिले और प्रकाश करते हैं। उसकी इसे कीमत है। दूसरी कीमत किसकी है उसमें? तब यह टिके, ऐसा तत्त्व तो यह त्रिकाली तत्त्व ज्ञायक सच्चिदानन्द प्रभु आत्मा है। और जिसका ज्ञानप्रकाश स्वभाव है, उसे जो किसी को ही अन्दर दुर्लभता से पा सकता है। आहाहा!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : तैरता है। यह पाँच हजार व्यक्ति कहाँ, लोग कहाँ थे वे? आत्मा को तैरता तब कहलाये। लो! ऐसा कि हाथ में हीरा हो तो दूसरा जाने तो सही कि यह हीरा है। तेरा क्या भला हुआ? हीरा उसमें पड़ा और मर जाये। हाय... हाय!

देखो न! अभी नहीं कहा भगवानभाई का? कहते हैं कि वह मारी तो ऐसे सब घुस गये थे। छर्रा-छर्रा। छूटे न गोली? छर्रा। उसकी दाह होती है। वह तो एक मिनिट में समाप्त हो जाये। उसमें भड़का उसका। जगजीवनभाई के बहुत परिचित थे, पहिचानवाले थे। नहीं? हाँ, मैंने कहा था। अभी नहीं थे अपने गत वर्ष तुम मिलने नहीं गये थे स्टेशन पर? स्टेशन पर मिलने गये थे। खबर है या नहीं? उसे सबको पहिचान सही न, बड़े लोगों के साथ बहुत पहिचान उसकी। हम गये थे। बलवन्तभाई निकले हैं। गत वर्ष थे न कुण्डला, तब? तो कहलवाया है जगजीवनभाई को कि मिलने आना। गये थे मिलने। वे भाई आये थे कुण्डलावाले। वे बलवन्तभाई आत्मा अन्दर है। अनन्त वीर्य का धीन भगवान, अनन्त ज्ञान और दर्शन का आनन्द का कन्द प्रभु आत्मा है। उसे अन्दर में मिलने जाये एकाग्र होकर, उसका नाम धर्म कहा जाता है। आहाहा! कठिन बातें परन्तु, भाई!

मुमुक्षु : .... नकली वस्तु माने।

पूज्य गुरुदेवश्री : नकली माने। वे सूरत के आते हैं न हीरा? कैसे कहलाते हैं? क्या कहलाते हैं? अर्टीफिशियल। अर्टीफिशियल को सच्चे में खतौनी कर डाले। आहाहा! चैतन्य हीरा भगवान! देह के परमाणु-मिट्टी से भिन्न। मरते हुए भी ऐसा कहते हैं या नहीं? यह देह छूट तो कहे, भाई! जीव गया। ऐसा कहते हैं कि शरीर गया साथ में? शरीर तो यह पड़ा रहा। जीव गया। परन्तु क्या जीव गया अन्दर? क्या था जीव में? अरूपी परन्तु है क्या वह? भगवान जाने कुछ होगा वा-बा, पवन-बवन। वह नहीं। श्वास तो जड़, मिट्टी, धूल है। अन्दर चिदानन्दमूर्ति ज्ञान का घन आनन्दकन्द सच्चिदानन्द अखण्ड स्वभावी वस्तु वह है। वह कभी इसने दृष्टि में, श्रद्धा में लिया नहीं। कहो, समझ में आया?

देखो! यह उपाध्याय इसमें से यह बताते हैं। पंचास्तिकाय में से शुद्ध जीवास्तिकाय; षट् द्रव्य में से निज शुद्ध जीवद्रव्य; सप्त तत्त्व में से निज शुद्ध जीवतत्त्व और नौ पदार्थों में से शुद्ध पदार्थ (बताते हैं)। **जो आप शुद्धात्मा है, वही उपादेय (ग्रहण करनेयोग्य) है, अन्य सब त्यागनेयोग्य हैं,...** देखो! श्रद्धा में सब छोड़नेयोग्य है। वह चार ज्ञान की

पर्याय प्रगट हो, वह भी छोड़नेयोग्य है। **ऐसा उपदेश करते हैं...** है ? ऐसा उपदेश करते हैं। अमरचन्दभाई! आहाहा! यह तो उपदेश ही उल्टे हो गये। आचार्य कहाँ रहे और उपाध्याय कहाँ रहे ? खोखा रहे नाम। आहाहा!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : .... संग कहना किसे ?

यहाँ तो कहते हैं, उपाध्याय सच्चे सन्त, मुनि, उपदेशक जिन्हें भगवान के कहे हुए पदार्थों का ज्ञान और निज स्वभाव भगवान आत्मा का आदरणीय भाव, ऐसा जो कथन जगत के समक्ष करते हैं, उन्हें उपाध्याय और उन्हें साधु, सन्त कहा जाता है। वरना इससे उल्टा कहे, वे साधु-सन्त नहीं हैं। वे सब गड़बड़िया चार गति में भटकनेवाले हैं। आहाहा! समझ में आया ? देखो! यह श्लोक। प्रभाकर भट्ट पहिचानकर वन्दन करने के बाद प्रश्न करेगा।

ऐसा उपदेश करते हैं, तथा... देखो! दूसरी बात। वह उपाध्याय कैसा उपदेश करते हैं ? **तथा शुद्धात्मस्वभाव का सम्यक्श्रद्धान...** यह शुद्ध... उन चार में से लिया था न ? भाई! पंचास्तिकाय, द्रव्य, तत्त्व और पदार्थ उनमें से लिया था। अब शुद्ध स्वभाव का सम्यक्श्रद्धान, उस मोक्षमार्ग का वर्णन करते हैं। उपाध्याय कैसा मोक्षमार्ग वर्णन करते हैं ? कैसा मोक्षमार्ग कहते हैं ? निश्चयमोक्षमार्ग कहते हैं। आहाहा! समझ में आया ? भगवान आत्मा शुद्ध है। वर्तमान पुण्य-पाप के मैल भाव हैं, उनके पीछे रहा हुआ पूरा तत्त्व, पुण्य-पाप के विकल्प उठते हैं, वे मैल हैं। उनके पीछे भगवान **शुद्धात्मस्वभाव का सम्यक्श्रद्धान-ज्ञान-आचरणरूप अभेद रत्नत्रय है,...** यह अभेद रत्नत्रय, जिस रत्नत्रय से मोक्ष मिलता है।

वही निश्चयमोक्षमार्ग है, ऐसा उपदेश शिष्यों को देते हैं,... देखो! अमरचन्दभाई! ऐसा उपदेश शिष्य को दे, उसे उपाध्याय कहा जाता है। वह श्रोता को उपदेश ऐसा करे कि यह भगवान शुद्धस्वरूप परमात्मा, जिसमें अन्तर्दृष्टि करके स्थिर होनेयोग्य है। ऐसा शुद्ध श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र जो अभेद रत्नत्रय, अभेद स्वभाव के साथ अभेद होते हैं न तीन ? ऐसा अभेद निश्चयरत्नत्रय वह निश्चयमोक्ष (मार्ग है)। देखो! अभेदरत्नत्रय

कहो, या निश्चयमोक्षमार्ग कहो, भेदरत्नत्रय कहो या व्यवहार कहो। आहाहा! गजब बात, भाई! वाडा में बैठे, उन्होंने कितनों ने तो सुना भी न हो। कैसे आचार्य और कैसे उपाध्याय और कैसा उनका उपदेश होता है? ऐई! जमुभाई! अहो!

ऐसा उपदेश शिष्यों को देते हैं, ऐसे उपाध्यायों को मैं नमस्कार करता हूँ,... प्रभाकर भट्ट कहता है, ऐसे उपाध्याय को मैं नमस्कार करता हूँ। आहाहा! समझ में आया? ऐसी कोई कथनपद्धति सन्तों की कि जिसमें पूरे जैनदर्शन का व्यवहार भी समाहित हो जाता है और आदरणीय क्या, यह भी बताते हैं। आहाहा! परमात्मप्रकाश भी एक...

मुमुक्षु : परमात्मा का प्रकाश....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। आत्मा परमात्मा का स्वरूप ही है अन्दर। यह जो द्रव्य स्वभाव जो परमात्मस्वरूप, परमस्वरूप भगवान आत्मा की श्रद्धा, उसका ज्ञान और उसका आचरणरूप अभेद आचरण, यह रत्नत्रय, वही सच्चा मोक्ष का मार्ग है। ऐसा उपाध्याय कहते हैं, वे सच्चे हैं। इससे विरुद्ध कहें वे खोटे हैं। समझ में आया?

अरे! अपने को छोड़कर बात। यहाँ अपने को आदरकर फिर दूसरी बात। स्वयं भगवान पूर्णानन्द का नाथ अखण्ड ज्ञायकस्वभाव से भरपूर प्रभु, अनन्त-अनन्त गुण का एकरूप द्रव्य, वही सत्य, वही भूतार्थ, वह सत्य का साहिबा, ऐसा भगवान निज स्वरूप ही एक श्रद्धा करनेयोग्य है, जाननेयोग्य है, आचरनेयोग्य है, रमनेयोग्य है, वेदन करनेयोग्य है। ऐसा अभेदरत्नत्रय का मार्ग उपाध्याय शिष्यों को कहते हैं। देखो! यह शिष्य भी उसे सुनते हैं, ऐसा कहते हैं। ऐसे वे शिष्य इनकार नहीं करते कि नहीं... नहीं... नहीं... नहीं... ऐसा नहीं होता, ऐसा नहीं होता, ऐसा नहीं होता, ऐसा नहीं होता। तो वह शिष्य ही नहीं है, ऐसा कहते हैं। क्या कहा? उपाध्याय ऐसा निश्चय मोक्षमार्ग अभेद रत्नत्रय कहते हैं। शिष्यों को कहते हैं। शिष्यों को कहते हैं, इसका अर्थ कि वह विनय से सुनता है। ऐसा निश्चय... निश्चय... निश्चय... नहीं परन्तु व्यवहार लाओ, ऐसा नहीं। ऐ कमलचन्दजी! क्या हो? समझ में आया? वाडा में ऐसी बात तो नोंच डाला है। वीतराग परमेश्वर त्रिलोकनाथ सर्वज्ञदेव का मार्ग, उसमें रहनेवालों ने भी फेरफार (कर डाला है)। वाडा में रहे हुए। आहाहा!

यह तो सिंह का मार्ग है। भेड़ में सिंह गया, भेड़ में सिंह गया। दूसरे सिंह ने चिल्लाहट मचायी तो दूसरे दुम दबाकर भागे, सिंह नहीं गया। ऐ... तू कैसे खड़ा रहा? कि मुझे कुछ त्रास नहीं हुआ। समझ न कि तू मेरी जाति का है! इसी प्रकार भगवान ने दिव्यध्वनि में गर्जना की, तू परमात्मा मेरी जाति का, मेरी नात का, मेरे स्वरूप से है, ऐसा तू अन्दर में है। सुननेवाला जगता है कि आहाहा! मैं यही हूँ। यह पुण्य-पाप और संयोग में रहता हूँ, वह मैं नहीं। आहाहा! समझ में आया? देखो! उपदेश आया न, इसलिए आया। उपदेश आया—गर्जना। उपाध्याय की ऐसी गर्जना! अभेदरत्नत्रय मोक्षमार्ग। हे शिष्य! सुन। वह इनकार नहीं करता, हों!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : पात्र बिना वस्तु नहीं टिकती।

ऐसा उपदेश शिष्यों को देते हैं,... कि नहीं... नहीं... नहीं... नहीं। साधारण लोगों को ऐसा नहीं कहना। अमुक को नहीं कहना। अरे! सुन न! साधारण अर्थात् कि भगवान आत्मा है। एक क्षण में फाट... फाट... (उग्र) पुरुषार्थ करके केवलज्ञान ले, ऐसा यह है। आहाहा! नहीं... नहीं, नहीं कर सकता, नहीं कर सकता। तू शोर मचाता है भिखारी की भाँति। समझ में आया? चैतन्य के सरोवर भगवान अनन्त गुण का सागर है। उसमें क्षण में केवलज्ञान पूर्ण पर्याय होने की सामर्थ्यवाला है। उसे ऐसा कहना कि, ऐसा नहीं... ऐसा नहीं... ऐसा नहीं। (उसमें) उसका अनादर होता है। समझ में आया? देखो न! यहाँ भी ब्रह्मदेव ने टीका भी कैसी की है! आचार्य ऐसे होते हैं, उन्हें पहिचानकर करते हैं, आता है न, प्रवचनसार में? मैं ज्ञान—दर्शनस्वरूपी आत्मा। मैं अरिहन्त को नमस्कार करता हूँ। अरिहन्त कैसे? कि ऐसे। यह शैली सब ली है। शैली सब आचार्यों की (ऐसी अलौकिक है)। समझ में आया? आहाहा!

ऐसे उपाध्यायों को मैं नमस्कार करता हूँ और शुद्ध एक ज्ञानस्वभाव शुद्धात्मतत्त्व की आराधनारूप... साधु की बात करते हैं। शुद्ध ज्ञान भगवान, शुद्ध ज्ञान एक स्वभाव अन्तर। ऐसा शुद्धात्मतत्त्व, शुद्ध ज्ञान एक स्वभाव। शुद्ध, बुद्ध है न शब्द में? बुद्ध का अर्थ ज्ञान किया। शुद्ध-बुद्ध एक स्वभाव। शुद्ध ज्ञान एक स्वभाव शुद्धात्मतत्त्व। उसकी

आराधना में **वीतराग निर्विकल्प समाधि को जो साधते हैं,...** देखो! अन्तर में **वीतराग निर्विकल्प समाधि को जो साधते हैं, उन साधुओं को मैं वन्दता हूँ।** उसे साधु कहा जाता है।

मुमुक्षु : व्यवहार....

पूज्य गुरुदेवश्री : व्यवहार की बात भी नहीं की। अन्तर अखण्डानन्द प्रभु शुद्धात्मा कैसा? कि शुद्ध ज्ञान एक स्वभाव। शुद्ध, बुद्ध एक स्वभाव। शुद्ध, बुद्ध। शुद्ध ज्ञान एक स्वभाव, बस। शुद्ध ज्ञान एक स्वभाव, ऐसा भगवान, वही आराधे। आराधनारूप, आराधनारूप। **वीतराग निर्विकल्प समाधि को जो साधते हैं, उन साधुओं को मैं वन्दता हूँ।** कहो, समझ में आया? **वीतराग निर्विकल्प समाधि को जो आचरते हैं,...** वे आचार्य, वे आचार्य। ऐसे निर्विकल्प समाधि को कहें, वे उपाध्याय और **साधते हैं, वे ही साधु हैं।** वे साधु। तीन के ले लिये तीन। आहाहा!

अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु ये ही पंच परमेष्ठी वन्दनेयोग्य हैं, ऐसा भावार्थ है। लो! यह पाँच परमेष्ठी इस प्रकार वन्दन करनेयोग्य है, यह भावार्थ किया।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)